।। इधर - उधर ।।

इधर,
तुम तो दुबके रहे घर पे, सहमें,
विषम होती परिस्थिति झेलते,
सोचते, समझते, झल्लाते,
व्यग्रता से गुल्लक खंगालते
अंतर्मन के भय को छिपाते।

उधर,
मौत का जकड़ता रहा तांडव,
शून्यों का बढ़ता रहा जमावड़ा,
ये करो, वो करो, ये तुम करो ना,
परिस्थिति बदलेगी, तुम डरो ना,
कहीं कुछ तो आशा है, ढूँढो ना।

इधर,
क्या सही है? क्या है ग़लत?
कर्म है, या है कलयुगी प्रपंच?
अर्ध विराम? या पूर्ण विराम?
तुम्हारा कुकृत्य या दैवी रोष?
बढ़ता केवल प्रश्नों का अम्बार।

उधर,
चहुं ओर शांति, निरभ्र गगन,
प्रस्फुटित हो रहे नूतन स्वर,
स्वच्छ नीर, शीतल होती वायु,
नवजीवित होते वन-उपवन,
तुम्हारी अनुपस्थिति से प्रफुल्लित।

इधर,
क्या अपनी दिशा बदलोगे?
या भूल जाओगे ये संस्मरण?
फिर पकड़ोगे अहंकारी राह?
संकुचित, स्वार्थी, ओछी चाह?
वही, जिसपर आज कराह रहे।

उधर,
तुम रहो, ना रहो, वसुंधरा रहेगी,
नगण्य, तुच्छ, दुर्बल हो, संज्ञान रहे,
अनंत ब्रह्मांड के क्षणभंगुर बुलबुले,
तेरेअस्तित्व का औचित्य कुछ नहीं,
याद रख! औक़ात ही तेरी कुछ नहीं।

समीर खांडेकर
हनुमान जयंती
08/04/2020